

उपनिषद् आधारित योग परम्परा

डॉ. रीजा
सहायक प्रवक्त्री (संस्कृत विभाग)
दयानन्द महिला महाविद्यालय
कुरुक्षेत्र, हरियाणा, भारत
ई-मेल: reeja.skt17@gmail.com
दूरभाष: 8168196003

संक्षेपिका

भारतीय षड् दर्शनों में 'योग' सर्वाधिक प्राचीन विद्या मानी जाती है। 'योग' को मुक्ति का सर्वोत्कृष्ट साधन माना गया है। मनुष्य जिन उद्देश्यों को समक्ष रखकर जीवन-पथ पर अग्रसर होता है उस धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष रूपी पुरुषार्थ चतुष्टय में मोक्ष ही मानव - जीवन का चरम लक्ष्य माना गया है। प्राचीन ऋषि - मुनियों की अद्भुत अन्तर्दृष्टि एवं ज्ञान का मूल कारण योगाभ्यास को ही माना गया है। सांसारिक दुःखों से पीड़ित जीवों को परमात्मा से मिलाने में योग भक्ति एवं ज्ञान का सहायक है।

कुंजी शब्द: वेद, योग, उपनिषद्, आत्मा, अष्टांग योग।

शोधपत्र

भारतीय चिन्तन में अनवरत आत्मज्ञान तथा सत्य की खोज पर वैचारिक मंथन परम्परागत रूप से होता रहा है। योग - विद्या के माध्यम से वास्तव में आत्म-तत्त्व का ज्ञान तथा यथार्थ से साधक अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति करता है। प्राचीन काल में मानव कल्याण के लिए ऋषि-मुनियों ने योग की अनेक शाखाओं को प्रतिपादित किया है। गीता के चतुर्थ अध्याय में श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं कि मैंने ही इस योग का उपदेश सृष्टि के आरम्भ में सूर्य को दिया था। इसके पश्चात् सूर्य ने अपने पुत्र मनु को यह योग रूपी ज्ञान दिया तथा मनु ने यह योग विद्या इक्ष्वाकु को दी।¹ ऋग्वेद के दसवें मण्डल के अनुसार हिरण्यगर्भ से ही सर्वप्रथम सृष्टि का निर्माण हुआ। उसी ने पृथ्वी, स्वर्ग इत्यादि सभी को धारण किया। क्योंकि हिरण्यगर्भ को सभी विद्याओं एवं कलाओं का आदि प्रवक्तृ माना जाता है।² महाभारत के अनुसार 'हिरण्यगर्भ' ही योग के आदि प्रवक्ता है।³

योग की महत्ता का वर्णन योगसूत्र, वेद, उपनिषद्, गीता, हठयोग प्रदीपिका, योगदर्शन तथा विभिन्न तन्त्र ग्रन्थों में मिलता है। साधना के रूप में योग एक ऐसी कला है जिसके द्वारा अनेक महापुरुषों ने अजर - अमर होकर सिद्ध पदवी को प्राप्त किया। संहिताओं एवं उपनिषदों में योग का विशद् विवेचन देखने को मिलता है। 'ऋग्वेद' में भी अनेक स्थलों पर योग शब्द का प्रयोग किया गया है -

यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन।

स धीनां योगमिन्वति॥⁴

अर्थात् जिस परमात्मा के बिना दृष्टिगत संसार कभी सिद्ध नहीं हो सकता वह परमात्मा सब मनुष्यों की बुद्धि और कर्मों के संयोग को जानता है। ऋग्वेद में योग को 'अप्राप्य की प्राप्ति' का वाचक भी माना गया है।⁵ यद्यपि यहाँ 'योग' शब्द समाधि अर्थ में प्रयुक्त नहीं हुआ है तथापि योग के अंगों, तप, स्वाध्याय आदि का वर्णन मिलता है।⁶

वेदों के दो विभाग किये गये हैं- मन्त्र ब्राह्मणात्मको वेदः। अर्थात् मंत्र और ब्राह्मण। मन्त्रों के संग्रह का नाम संहिता है। मन्त्रों के विनियोग आदि विषयों को बताने के लिये ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना की गयी। ब्राह्मण ग्रन्थों का अन्तिम भाग आरण्यक कहलाया तथा आरण्यकों के अन्तिम भाग को 'उपनिषद्' नाम से जाना जाता है। इसी कारण से उपनिषदों को वेदान्त कहा जाता है। उपनिषद् साहित्य में योग का बहुधा वर्णन मिलता है। उपनिषदों की संख्या 108 मानी गयी है।⁷ कुछ उपनिषद् ऐसे हैं, जिनमें योग का ही विशेष रूप से वर्णन मिलता है।

कुछ उपनिषदों में योग के सम्पूर्ण अंगो-यम-नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा व समाधि का विवेचन प्राप्त होता है।⁸ योग परम्परा से सम्बन्धित कुछ अन्य उपनिषदों के नामों का उल्लेख इस प्रकार है-

- | | |
|---------------------------|--------------------------|
| 1. अद्वयतारकोपनिषद् | 12. ब्रह्मविद्योपनिषद् |
| 2. अमृतबिन्दु उपनिषद् | 13. मण्डलब्राह्मणोपनिषद् |
| 3. अमृतनादोपनिषद् | 14. योगकुण्डल्युपनिषद् |
| 4. मुक्ति उपनिषद् | 15. योगचुडामण्युपनिषद् |
| 5. तेजोबिन्दूपनिषद् | 16. शाण्डिल्युपनिषद् |
| 6. त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् | 17. हंसोपनिषद् |
| 7. दर्शनोपनिषद् | 18. योगतत्त्वोपनिषद् |
| 8. ध्यानबिन्दूपनिषद् | 19. योगशिखोपनिषद् |
| 9. नादबिन्दूपनिषद् | 20. योगराजोपनिषद् |
| 10. पाशुपतब्राह्मणोपनिषद् | 21. वराहोपनिषद् इत्यादि। |
| 11. महावाक्योपनिषद् | |

इन सभी उपनिषदों में चित्त, चक्र, नाड़ी, कुण्डलिनी इन्द्रियों आदि यम-नियम-आसन, प्राणायाम-प्रत्याहार, धारणा-ध्यान-समाधि, मंत्रयोग, लययोग, हठयोग, राजयोग, ब्रह्मध्यान योग, ज्ञानयोग तथा चित्त की अवस्थाओं का विस्तृत रूप से वर्णन मिलता है।

'अद्वयतारकोपनिषद्' में अनुसंधानपूर्वक लक्ष्यत्रय के द्वारा तारक योग का वर्णन मिलता है।⁹ 'अमृतबिन्दूपनिषद्' में मन को बन्धन का कारण माना गया है तथा मन जब विषयों की आसक्ति से मुक्त होकर हृदय में निरुद्ध हो जाता है तब ब्रह्मरूपी परमपद प्राप्त होता है। इस उपनिषद् में ज्ञान के स्वरूप और ध्यान के प्रकार का भी वर्णन है।¹⁰ 'तेजोबिन्दूपनिषद्' छः अध्यायों में विभक्त है। इसके प्रथम अध्याय में पंचदशयोग का क्रमानुसार वर्णन किया गया है।¹¹

'योगशिखोपनिषद्' में योग की परिभाषा लिखते हुए कहा गया है कि प्राण और अपान की एकता सत् (सत्त्व), रज, रूपी कुण्डलिनी की शक्ति और स्वरेत रूपी आत्मत्व का मिलन, सूर्यस्वर तथा चन्द्रस्वर का मिलन एवं जीवात्मा व परमात्मा का मिलन ही योग है।¹² अमृतोपनिषद् में योग के अंगों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, प्राणायाम, तर्क और समाधि ये षडंग योग कहलाता है।¹³

‘योगतत्त्वोपनिषद्’ के अनुसार योग के बिना ज्ञान, ध्रुव मोक्ष दाता कैसे हो सकता है उसी प्रकार ज्ञानहीन योग भी मोक्षकर्म में असमर्थ है। इसलिये मोक्ष की प्राप्ति के लिये ज्ञान और योग दोनों का होना अनिवार्य है। ‘योगतत्त्वोपनिषद्’ में मन्त्र योग, लय योग, हठयोग व राजयोग इन चारों प्रकार के योगों के लक्षण दिए गये हैं।¹⁴

योग के महत्व को प्रतिपादित करते हुए कठोपनिषद् में कहा गया है कि इन्द्रियों की स्थिर धारणा अर्थात् उनके संयम को योग कहा गया है। इसके साधन को करने वाला साधक प्रमाद से रहित हो जाता है तथा शुभ संस्कारों को प्राप्त होता है। उसी परमगति की स्थिति को योग कहते हैं।¹⁵

‘श्वेताश्वतरोपनिषद्’ के अनुसार पृथ्वी, जल, वायु, तेज और आकाश इन पंचमहाभूतों का ठीक प्रकार से उत्थान होने पर इनसे सम्बन्धित योग विषयक गुणों की सिद्धि होने पर योग अग्नि से युक्त शरीर धारण करने वाले योगी को न रोग होता है, न वृद्धावस्था आती है और न ही असमय मृत्यु प्राप्त होती है।¹⁶ ‘मुण्डकोपनिषद्’ में ईश्वर से यम-नियम-आसन-प्राणायाम इत्यादि की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि देवता, मनुष्य, पशु-पक्षी, प्राण-अपान वायु, और, तप, श्रद्धा, सत्य ब्रह्मचर्य और यज्ञ आदि के अनुष्ठान की विधि सभी उसी से उत्पन्न हुए हैं।¹⁷

‘बृहदारण्यक उपनिषद्’ में ‘योग’ को आत्मा के साक्षात् दर्शन का उपाय कहा गया है।¹⁸ इस उपनिषद् में आत्मा का दर्शन ही फल है। श्रवण, मनन और निदिध्यासन इसके उपाय हैं इसमें निदिध्यासन ध्यान है और ध्यान ही समाधि है, जो कि योगसूत्र में भी वर्णित है।¹⁹ इसी उपनिषद् में प्राणायाम को परिभाषित करते हुए ऋषि याज्ञवल्क्य द्वारा कहा गया है - ‘प्राण से प्राणन क्रिया करने वाली, अपान ने अपान क्रिया करने वाली, व्यान से व्यान क्रिया करने वाली तथा उदान से उदान क्रिया करने वाली वह तुम्हारी आत्मा ही सर्वान्तर है।’²⁰ इसी प्रकार ‘मैत्रायणी उपनिषद्’ में योग के छः अंगों- प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा, तर्क और समाधि का अनेक स्थलों पर उल्लेख मिलता है।²¹

उपनिषद् का एक अर्थ रहस्य भी माना जाता है। इन सभी उपनिषदों के अवलोकन से ज्ञात होता है प्राचीनकाल में ऋषि-मुनि उपनिषदों में निहित योग-विद्या अथवा ब्रह्मविद्या के रहस्य को भली भांति समझते थे। उस समय में योग-विद्या का वर्णन सभी मनुष्यों के समक्ष नहीं किया जाता था अपितु जिज्ञासु व्यक्तियों की परीक्षा लेकर उन्हें योग-विद्या का प्रशिक्षण दिया जाता था। उपनिषदों में मुख्य रूप से प्रतिपादित तीन सत्ताओं- पुरुष, जीव तथा प्रकृति का विवेचन मिलता है।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नयो अभिचाकशीति॥²²

अर्थात् यहाँ वृक्ष से अभिप्राय शरीर से है, दोनों पक्षी ईश्वर एवं जीव हैं। पिप्पल शब्द जीव द्वारा भुक्त भोगों का परिचायक है। उपनिषदों में मुख्य रूप से ब्रह्मविद्या का ही वर्णन मिलता है। यही ब्रह्म-विद्या अध्यात्म-विद्या अथवा योग-विद्या के नाम से जानी जाती है। उपनिषद् आध्यात्मिक विकास के मार्ग को प्रदर्शित करने वाले महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। आध्यात्मिक चेतना के विकास में योग-साधना का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। अतः सभी उपनिषदों में योग के अंगों व साधना की विधि का वर्णन प्राप्त होता है। उपनिषद् ग्रन्थों में योग के आठ अंगों के साथ ही चित्त की अवस्था आदि का भी विवेचन किया गया है।

अतः उपनिषदों में योग विषयक पर्याप्त सामग्री उपलब्ध होती है। कठोपनिषद् तथा श्वेताश्वतरोपनिषद् तो स्पष्ट रूप से योग के ही प्रतिपादक रहे हैं। इनमें न केवल योग शब्द का प्रयोग हुआ है अपितु प्राणायाम एवं ध्यान आदि की विधियों का भी उल्लेख किया गया है। इसके अतिरिक्त अन्य योगोपनिषदों में भी योग विषयक सामग्री प्रचुर रूप में देखने को मिलती है। इन उपनिषदों में पातंजल अष्टांग योग की प्रक्रिया स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। योग दर्शन के समान ही योगविषयक तथ्यों की अनुभूति तथा योगमार्ग का वर्णन उपनिषदों में भी मिलता है।

संदर्भ सूची

1. श्रीमद्भगवद्गीता-4.1 - इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमण्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥
2. ऋग्वेद-10.121.1- हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
3. महाभारत-12.337.60 - सांख्यस्य वक्ता कपिलः परमीर्षः स उच्यते।
हिरण्यगर्भो योगस्य वेत्ता नान्यः पुरातनः ॥
4. ऋग्वेद संहिता- 1.18.7
5. ऋग्वेद संहिता-1.5.3-स घा नो योग आ भुवत् स राये स पुरंध्याम् गमद् वाजेगिरा सनः॥
6. वही, 1.5.3
7. मुक्तिकोपनिषद्, प्रथम अध्याय, उपनिषद्संग्रह, पृ० 658-659
8. भारतीय दर्शन, पृ० 346
9. अद्वयतारकोपनिषद्-1.1 -तदद्वयं ब्रह्म तत्सिद्धयैः लक्ष्य त्रयानुसन्धानः कर्तव्यः।
10. अमृतबिन्दूपनिषद्-1.2- बन्धाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं स्मृतम् ॥
11. तेजोबिन्दूपनिषद्-1.15-26-आत्मध्यानं समाधिश्च प्रोक्तान्यगानि वै क्रमात्।
12. योगशिखोपनिषद्-1.68.69-योऽपान प्राणयोर्ऐक्यं रजसो रेतसो तथा।
सूर्य चन्द्रमसोर्योगाद् जीवात्मा परमात्मनो॥
एवं तु द्वन्द्व जालस्य संयोगो योग उच्यते।
13. अमृतनादोपनिषद्-1.6- प्रत्याहारस्तथा ध्यानं प्राणायामोऽथ धारणा।
तर्कश्चैव समाधिश्च षड्गोयोग उच्यते।
14. योगतत्त्वोपनिषद्-14,15-योगहीनं कथं ज्ञानं मोक्षदं भवति ध्रुवम्।
योगोहि ज्ञानहीनस्तु न क्षमो मोक्ष कर्मणि।
15. कठोपनिषद्-2.3.10-11 - तां योगमिति मन्यते स्थिरामिन्द्रिय धारणाम्।
अप्रमत्तस्तदा भवति योगो ही प्रभवाप्ययो॥
16. श्वेताश्वतरोपनिषद्-2.12-
पृथ्व्याप्यतेजोऽनिल खे समुत्थिते पंचात्मके योगगुणे प्रवृत्ते।
न तस्य रोगो न जरा न मृत्युः प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्॥

17. मुण्डकोपनिषद्-2.1.7-
तस्माच्च देवा बहुधा संप्रसूताः साध्या मनुष्याः पशवो वयांसि।
प्राणापानौ ब्रीहियवौ तपश्च श्रद्धा सत्यं ब्रह्मचर्यं विधिश्च॥
18. बृहदारण्यकोपनिषद्-2.4.5 - आत्मा वा अरे द्रष्टव्यं श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः
19. योग-सूत्र (व्यास भाष्य सहित), 3.13
20. बृहदारण्यकोपनिषद्-3.4.1 - याज्ञवल्क्येतिहोवाच यः प्राणेन प्राणिति स त आत्मा
सर्वान्तरोयोऽपानेनापानीति स त आत्मा सर्वान्तरो यो व्यानेनव्यानिति
स त आत्मा सर्वान्तरो य उदानेनोदानिति स त आत्मा सर्वान्तरः एष
त आत्मा सर्वान्तरः ॥
21. मैत्रायणी उपनिषद् -6.18-तथा तत्प्रयोगकल्पः प्राणायामः प्रत्याहारो ।
ध्यान, धारणा, तर्कः समाधिः षडंग इत्युच्यते ॥
22. मैत्रायणी उपनिषद्, 3.1.1, 1.164.80